निर्मित छवियों के परे...

सुमन केशरी

पचरंग चोला पहन सखी री मीरांबाई पर लगातार शोध कर रहे डॉ. माधव हाड़ा की महत्त्वपूर्ण पुस्तक है। यूँ तो मीरांबाई ने भारतीय जनमानस को लगभग पाँच सदी से प्रेरित-प्रभावित किया हुआ है किंतु राष्ट्रीय आंदोलन में मीरां अहिंसक सत्याग्रही की निडर प्रतीक की तरह उभरीं। गांधीजी की दृष्टि में उनके भजन, प्रेम की सहज अभिव्यक्ति थे, जिनमें दिखावे या आडंबर की गंध तक न थी। किंतु धीरे धीरे मीरां स्त्री व्यक्ति की और नारी मुक्ति आंदोलन की अप्रतिम प्रतीक बन गईं। भक्ति साहित्य और विशेषकर सूर और मीरां के साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान जॉन स्ट्रॉटन हॉली ने अपनी पुस्तक "थ्री भक्ति वॉयसेज" की भूमिका में लिखा है कि न्यूयार्क के 'बरनार्ड कॉलेज और कोलंबिया यूनीवर्सिटी में प्रत्येक वर्ष वसंत के दौरान एक दिन कैंपस की महिलाएँ विश्व में हुईं महत्त्वपूर्ण स्त्रियों के चित्रों वाले बहुत लंबे बैनर से बटलर लाइब्रेरी की उस दीवार को ढंक देती हैं, जिस पर प्रसिद्ध विद्वानों के नाम लिखे हुए हैं। मीरांबाई का नाम इस बैनर में सन् 1994 को जोड़ा गया था। तबसे लेकर आजतक मीरांबाई उस बैनर में हर वर्ष सुशोभित होती हैं।' [i]

यह संयोग नहीं है कि ' जेंडर स्टडीज़' के अंतर्गत मीरांबाई पर परिता मुक्ता की चर्चित पुस्तक 'अपहोल्डिंग द कॉमन लाइफ़- द कम्यूनिटी ऑफ़ मीराबाई'[ii] 1994 में ही प्रकाशित हुई है, जिसमें मीरांबाई को हाशिए के समाज की आवाज निरुपित किया गया है। अपने शोध में परिता, राजपूत समाज में मीरां की बेहतर उपस्थिति का अधिकांश श्रेय कर्नल जेम्स टॉड के राजस्थान विषयक लेखन को देती हैं। कर्नल टॉड की नजर में मीरां पवित्र रोमांस की कवियत्री है।[iii] पर यह कहना ज्यादा उपयोगी होगा कि संत समाज में मीरांबाई की उपस्थिति सोलहवीं शताब्दी से ही भक्तों और संतों द्वारा नोट की गई है। हरिराम की 'व्यासवाणी' 1555 ई. में मीरांबाई 'भक्तनि को पिता' स्वरूप देखती हैं। नाभादास अपने भक्त माल (1594) में मीरां को कृष्ण से गोपीवत् निडर निरंकुश प्रेम करने वाली भक्तिन की तरह पाते हैं। प्रियादास 1712 ई में भक्तमाल की टीका लिखते हुए बाल्यकाल से लेकर मृत्यु तक की पूरी कहानी मय चमत्कारों के सुनाते हैं। माधव हाड़ा इन सभी का उल्लेख अपनी टिप्पणियों के साथ *पचरंग चोला पहन सखी री* में विस्तार के साथ करते हैं।[iv]

मीरांबाई की कविता पर बात करते हुए डॉ. माधव हाड़ा लिखते हैं कि, "मीरां की इस समय दो छवियाँ चलन में हैं। एक उसकी रहस्यवादी संतभक्त और रुमानी कवयित्री की जो मध्यकालीन धार्मिक चरित्राख्यानों और उपनिवेशकालीन इतिहासकारों ने गढ़ी है।...मीरां की दूसरी छवि वंचित-उत्पीड़ित हाशिए की विद्रोही स्त्री की है, जो कुछ वामपंथी आलोचकों और इधर के स्त्री विमर्शकारों ने बनाई है। इन विमर्शकारों की निगाह में भारतीय समाज पूरी तरह ब्राह्मण निर्देशात्मक ग्रंथों पर निर्भर और ठंडा ठहरा हुआ है।...वे मानते हैं कि यह इस समाज के

हाशिए का स्वर है। इनका इतिहास और यथार्थ से कोई संबंध नहीं है। इन निर्मित छवियों के कारण मीरां के भौतिक स्त्री अस्तित्व का संघर्ष अनदेखा रह गया है। मीरां संत भक्त से पहले एक स्त्री है, जो अन्याय और दमन के प्रतिरोध में खड़ी है। उसका यह प्रतिरोध असाधारण और हाशिए का प्रतिरोध नहीं है। यह भारतीय समाज की निरंतर गतिशीलता का एक रूप है...।"

यही वह कुंजी है जिसके आधार पर माधव हाड़ा मीरां के जीवन और समाज पर विस्तार से बात करते हैं। *पचरंग चोला पहन सखी री* -छह अध्यायों, यथा- जीवन, समाज, धर्माख्यान, कविता, कैननाइजेशन और छवि निर्माण के माध्यम से मीरां के जीवन और समाज, धर्माख्यान में मीरां की उपस्थिति, मीरां की कविता में प्रकृति, समाज और संघर्ष तथा जनमानस में मीरां की बदलती छवि का वर्णन करती है।

नाभादास के 'भक्तमाल' के समय से ही मीरां के संदर्भ में यह बात बार बार सामने आई है कि लोकलाज और कुल शृंखला को तोड़ने वाली मीरा को गरलपान करना पड़ा। स्वयं मीरां की रचनाएं 'विष का प्याला राणा भेज्या' तथा 'सास कहे कुल नासी रे' आदि भी इस बात को प्रमाणित करती हैं। हाशिए का कोई भी विमर्श दमन की इन स्मृतियों पर इतना अधिक बल देता है कि वह इन स्मृतियों की प्रतीकात्मकता भूल जाता है और ये भी भूल जाता है कि भारत का हो या कहीं का भी किसी समाज के बारे में लिखित व्यवस्थाओं से ज्यादा ध्यान वास्तविक दैनंदिन व्यवहार पर दिया जाना चाहिए। वही जिसे मरदुमशुमारी राजमारवाड़ के लेखक मुंशी हरदियाल सिंह "रीत भांत, चाल चलगत" कहते हैं।

मीरां मेड़ता के शासक रावदूदा की पौत्री थीं और उनका विवाह चित्तौड़ के शासक राणा सांगा के पुत्र भोजराज से हुआ था। जाहिर है कि उनकी भिन्न जीवनशैली के कारण ससुराल में उनके संबंध तनावपूर्ण रहे होंगे। लेकिन किस हद तक? ये तनाव या राणा परिवार का क्रोध क्या रूप लेता था और क्या नहीं? मीरां पर लिखी गई अत्यंत चर्चित पुस्तक 'अपहोल्डिंग द कॉमन लाइफ़- द कम्यूनिटी ऑफ़ मीराबाई' की लेखिका परिता मुक्ता मीरां को अपने मनचाहे विमर्श का प्रमाण बनाने के उत्साह में उपरोक्त जरूरी सवाल पूछना भूल गई हैं। माधव हाड़ा मीरा के पितृवंश के इतिहासकार गोपाल सिंह मेड़तिया के हवाले से हमें बताते हैं कि राणा सांगा ने उन्हें हाथ खर्च के लिए पुर और मांडल दो परगने दिए थे। उनके पास धन, रत्न भूषण आदि भी होंगे। उसी संचित द्रव्य से वे दान-पुण्य, साधु सेवा, आथित्य आदि करती होंगी। मीरा के साधु-सेवा की प्रसिद्धि उनके अपने जीवनकाल में ही हो गई थी। 1555 में राधावल्लभ समप्रदाय के हितहरिवंश के अनुवर्ती ओरछा निवासी हित हरिराम की 'व्यासवाणी' में कहा गया है- 'मीरांबाई बिनु कौ भक्तनि को पिता जानि उर लावै।'[vii]ध्यातव्य है कि इस पंक्ति में मीरां भक्तों को पिता तुल्य समझती थीं। वल्लभ संप्रदाय की वार्ताओं में भी हमें यह सूचना मिलती है कि मीरां के घर पर भक्तों- साधुओं की भीड़ लगी रहती थी और वे उन्हें दान आदि भी देती थीं।[viii]

माधव हाड़ा द्वारा मीरां की आर्थिक स्थिति का उद्घाटन इस बात की ओर संकेत है कि बावजूद इसके कि साधु-संगति आदि के चलते चित्तौड़ का राजघराना मीरां से विमुख हो गया था

और उन्हें से प्रताड़ित किया जा रहा था, पर उन्हें परगनों की आय से वंचित नहीं किया गया और न ही साधुओं के सत्कार को रोका गया। इसी तरह मीरां को भोजराज की मृत्यु के बाद सती होने के लिए बाध्य नहीं किया गया। डॉ. हाड़ा इस बात पर भी बल देते हैं कि मीरां ने कभी काषाय वस्त्र धारण नहीं किए। दरअसल लेखक ने बहुत विस्तार से मीरां के विद्रोह के आर्थिक आधारों का वर्णन किया है। किसी स्त्री के पास आय के लिए परगनों का होना उस समय के समाज और अर्थव्यवस्था की गतिशीलता का सूचक है। स्त्रियाँ अपने आय का इस्तेमाल साधु-सेवा से लेकर, रत्न-गहने खरीदने तथा व्यापार करने तक कर सकती थीं। यह स्त्रियों के स्वायत्त व्यवहार के आर्थिक आधार की सूचना देता है। माधव हाड़ा इस बात को बलपूर्वक कहते हैं कि "स्त्रियों के सम्मान और सुरक्षा, सामाजिक जीवन में भागीदारी और स्वतंत्रता के मामले में भी यह समाज पिछड़ा हुआ नहीं था।...शासक ..की असामयिक मृत्यु हो जाने पर उत्तराधिकारी के अल्पवय होने की स्थिति में ..बीकानेर के शासक रायसिंह की पत्नी गंगाबाई ने अपने बालक पुत्र सूर्यसिंह के कार्यकाल में सभी तरह के राज्य कार्य संपन्न किए थे। जोधपुर के जसवंतसिंह की रानी ने पुत्र अजीतसिंह को मुगलों से उत्तराधिकार दिलाया था...परिता मुक्ता का यह कहना कि इस दौरान अधिक शक्तिशाली विजेता कम शक्ति वाले राजा की स्त्रियों को बलात् हासिल कर लेते थे और वे भूमि की तरह वीरों के अधिकार में आती-जाती रहती थीं, गलत है।"..उदाहरण स्वरूप लेखक ने सोलंकी हरजोत की कन्या समेत, महाराणा मोकल के राज्य की लड़कियों का जिक्र किया है। इसी तरह उन्होंने सती प्रथा की व्यापकता को भी नकारा है। यानी कि यह पुस्तक तत्कालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति की अलग ही तस्वीर उपस्थित करती है।

इस पुस्तक में लेखक ने बहुत विस्तार के साथ तत्कालीन राजस्थान के राजनैतिक उठापटक का वर्णन किया है। पहली दृष्टि में इस प्रकार के विस्तृत वर्णनों की उपादेयता पर प्रश्न उठाया जा सकता है किंतु ध्यान से पढ़ने पर इन वर्णनों के निष्कर्षों के महत्त्व दृष्टिगत होने लगते हैं। महाराणा सांगा की मृत्यु के बाद महलों में घट रही घटनाओं का प्रभाव मीरां के जीवन पर पड़ता दिखाई देता है और वे परिस्थितियाँ सामने आती हैं, जिनके चलते मीरां चित्तौड़ छोड़ने को बाध्य होती हैं। माधव हाड़ा इस ओर भी संकेत करते हैं कि अगर मीरां गुजरात के सुल्तान बहादुर शाह के आक्रमण के समय चित्तौड़ में होतीं तो रानी करमेती आदि के साथ उन्हें भी जौहर करना पड़ता, क्योंकि तब तक मेवाड़ में सती प्रथा का प्रसार हो चुका था। इस प्रकार समाज और राजनीति संबंधी ये विवरण हमारे सम्मुख मीरां की स्थिति के साथ साथ राजस्थान के तत्कालीन समाज का जरूरी खाका प्रस्तुत करते हैं। यह बात जरूर है कि इन विवरणों में बहुत दुहराव है जिससे कि उनकी प्रभावान्विति में कमी आई है और पाठ बोझिल हो गया है। लेखक को संपादन द्वारा इन दुहरावों से बचना चाहिए था।

माधव हाड़ा का मीरां संबंधी शोध पुरुषोत्तम अग्रवाल की बहुचर्चित पुस्तक 'अकथ कहानी प्रेम की: कबीर की कविता और उनका समय' की याद दिलाता है। पुरुषोत्तम अग्रवाल ने अपनी इस पुस्तक में आरंभिक आधुनिक काल में व्यापार के प्रसार के कारण भारतीय समाज में आ रही व्यापक गतिशीलता पर विस्तृत विचार किया है। अंग्रेजी राज के पहले का भारतीय समाज

बर्फ में जमा हुआ-सा था ब्राह्मणों का वर्चस्व देश के सभी हिस्सों में एक समान छाया हुआ था, इस तरह की मान्यताओं को पुरुषोत्तम की पुस्तक विचारोत्तेजक ढंग से काटती है।[ix] माधव हाड़ा की तर्क पद्धति भी इसी प्रकार की है और यह भी रोचक है कि मुंशी हरदयाल सिंह की 'रिपोर्ट मरदुमशुमारी राज मारवाड़ ई. सन् 1891' इन दोनो ही विद्वानों के तर्क में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

'राणी मंगा भाटों की बही' के हवाले से अधिकांश विद्वान 1498 ई. को मीरां का जन्म वर्ष मानते हैं। स्वयं माधव हाड़ा भी इसी के पक्ष में हैं- "माराजकुंवर रत्नसिंह री बेटी मीरांबाई (खींचियों की दोहिती) हुई। जन्म समत 1555 सावन वद भृगुवार रो ने समत 1605 चेत वद 3 द्वारका में राम केयो। चितौड़ रे राना सांगा रै माराज कुवर भोजसी नै परणई(परणाई)।"

मीरां की मृत्यु के संदर्भ में यह लोक प्रचलित है कि वे द्वारका के रणछोड़ जी की मूर्ति में विलीन हो गईं, क्यों कि वे उदयसिंह और जयमल के बुलावे पर वापस न तो मेवाड़ जाना चाहती थीं और न मेड़ता। मीरां की रणछोड़ जी की मूर्ति में प्रवेश संबंधी प्रसंग सबसे पहले 1712 में प्रणीत प्रियादास रचित नाभादास के भक्तमाल की टीका में आता है। लोकप्रचलित मान्यताओं, जुबानी इतिहास आदि के आधार पर मीरां के परलोक गमन का समय ई. 1546 (मीरां के प्रारंभिक अध्येता मुंशी देवी प्रसाद तथा इतिहासकार गौरी शंकर, आ. परशुराम चतुर्वेदी)), 1549 (हरविलास सारडा) तथा 1547 (कल्याणसिंह शेखावत) तथा 'राणी मंगा भाटों की बही' के आधार पर 1548 ई. को भी मान लिया गया है।

किंतु मीरां की मृत्यु के संदर्भ में माधव हाड़ा इन सभी वर्षो को प्रश्नचिन्हित करते हैं। उनके अनुसार, "लोक में प्रचारित हो गया कि 1546 के आसपास मीरां भगवान रणछोड़ जी की मूर्ति में समा गईं। मीरां के अध्योताओं और इतिहासकारों ने मान लिया कि किसी दुर्घटना, बीमारी या जल समाधि लेने से हुई मीरां की मृत्यु को लोक ने अपने स्वभाव के अनुसार चमत्कार के रूप में प्रचारित किया है... मूर्ति में समा जाने की कहानी मीरां से मेवाड़ लौटने का आग्रह करने वाले ब्राह्मणों ने अपनी असफलता छिपाने के लिए गढ़ी होगी।"माधव हाड़ा जर्मन विद्वान हरमन गोएट्जे (मीरांबाईः हर लाइफ़ ऐंड टाइम्स, भारतीय विद्याभवन, मुंबई,1966) के आधार पर कयास लगाते हैं कि मीरां द्वारका से चुपचाप निकल कर कहीं दक्षिण और पूर्वी भारत के तीर्थस्थानों की यात्रा और प्रवास पर होंगी। वे लिखते हैं कि, " लगभग एक दशक बाद 1560 ई. से कुछ पहले सबसे पहले उत्तर भारत के बांधवगढ़ (रीवां) के राजा रामचंद्र बाघेला(1555-1592) के दरबार में उसकी उपस्थिति के कुछ संकेत मिलते हैं।...जनश्रुतियों में वर्णित तानसेन, तुलसीदास, अकबर, मानसिंह और बीरबल से उसकी भेंट इसी दौरान हुई होगी...मेवाड़-मारवाड़ के लोक में भी मीरां के बाघेलों के यहाँ जीवित होने की अपुष्ट जानकारी थी यह उल्लेख उसके पदों में एक स्थान पर आता है। मीरां की ननद ऊदां एक पद में कहती हैं कि राणाजी के बाघेलों, तुम खबर लो कि मेड़तनी मीरां जीवित है कि मर गई।" माधव हाड़ा इसी संदर्भ में तानसेन, अकबर, बीरबल, चित्रकूट में निवास कर रहे तुलसीदास से मीरां की भेंट का कयास लगाते हैं। उनके अनुसार यहाँ से मीरां आम्बेर और मथुरा चली गईं। आम्बेर में ही अकबर से मुलाकात संभव हुई होगी क्यों कि मानसिंह और बीरबल, अकबर के बहुत निकट थे।

पुस्तक का यह हिस्सा मन में कई सवाल उठाता है और मीरां के जीवन को एक अन्य दृष्टि से देखने को प्रेरित करता है, जो किसी भी पुस्तक के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण बात मानी जाएगी।

कोई भी ऐसी किताब जो एक विशिष्ट ऐतिहासिक समय को किसी रचनाकार के माध्यम से पढ़ने का न्योता देती है, उससे कुछ उम्मीदें स्वभावतः बन जाती हैं। मसलन मीरां पर लिखी इस किताब में मीरां के काव्य के बारे में केवल उसकी सामाजिक उपादेयता नहीं बल्कि उसके साहित्यिक गुणवत्ता के विषय में भी कुछ नई बातें पढ़ने को मिलेंगी। माधव जी की किताब इस मामले में मुझ सरीखे पाठक को कुछ निराश ही करती है। कविता शीर्षक अध्याय में वे लिखते हैं, " मीरां की कविता में वस्तु जगत बहुत सघन और व्यापक रूप में मौजूद है। नदी, तालाब, पेड़, पौधे, पशु, पक्षी, हवा, बिजली, धरती, आकाश, बादल, बरसात, जंगल, समुद्र, महल अटारी, वस्त्र आभूषण आदि मीरां की कविता में जितने आग्रह और उत्साह के साथ आते हैं, वैसे किसी और मध्यकालीन संत-भक्त की कविता में नहीं आते...।" यह दरअसल सपाटे में दिया गया वक्तव्य लगता है क्योंकि इसे पढ़ते ही मन में सूरदास और तुलसीदास की अनेक पंक्तियाँ उभरने लगीं।

इसके अलावा मीरां और मेड़ता- मेवाड़ आदि के शासकों के लिए एकवचन का प्रयोग बहुत खलता है। मीरां के व्यक्तित्व के स्वातंत्र्य चेतना के लिए माधव हाड़ा ने 'स्वेच्छाचार' शब्द का प्रयोग किया है जो उचित नहीं प्रतीत होता। स्वेच्छाचार एक अवमाननापूर्ण- अपमानपूर्ण शब्द है, जो मीरां के संघर्ष को कमतर कर देता है। सचेत, स्वतंत्रचेता, साहसी और कृष्णभक्ति के प्रति आत्मविश्वास से भरी मीरां को कदापि स्वेच्छाचारी नहीं कहा जा सकता। एक अकादमिक किताब में शब्दानुक्रमणिका का न होना भी खलने वाली बात रही। इतने सारे महत्त्वपूर्ण तथ्यों से दूरगामी निष्कर्ष निकालने वाली किताब में शब्दानुक्रमणिका का होना बहुत जरूरी है। इसके साथ ही यह कहना जरूरी लग रहा है कि बहुत समय से यूरोप और अमेरिका में मीरांबाई पर गंभीर शोधपरक काम होते रहे हैं किंतु इस पुस्तक में उनका कोई नोटिस तक नहीं लिया गया है। आशा है कि इसके अगले संस्करण में माधव हाड़ा इन बातों पर भी ध्यान देंगे।

---

[i] जॉन स्ट्रॉटन हॉली, थ्री भक्ति वॉयसेज़, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, 2005. पृ. 2

[ii] परिता मुक्ता, 'अपहोल्डिंग द कॉमन लाइफ़- द कम्यूनिटी ऑफ़ मीराबाई' ऑक्सफ़ोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, इंडिया, 1994

[iii] वही पृ 173-74

[iv] माधव हाड़ा, मीरां का जीवन और समाज- पचरंग चोला पहन सखी री, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृ108-22

[vii] वही, पृ. 117

[viii] चौरासी वैष्णवन की वार्ता, संपा. डॉ. कमला शंकर त्रिपाठी, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थन, लखनऊ, 2008, पृ 188

[ix] पुरुषोत्तम अग्रवाल, 'अकथ कहानी प्रेम की: कबीर की कविता और उनका समय', दूसरा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 16,128-140